दारिद्रये दुर्लभं सत्त्वम्

प्रस्तुतः पाठः 'चारुदत्तं' नाटकस्य प्रथमाङ्कात् सङ्कलितः। नाटकस्य नायकः चारुदत्तः अस्ति। सः उज्जयिनीवासी, रूपवान्, गुणवान् सङ्गीतविद्यायाः प्रेमी, परोपकारपरायणः च।

चारुदत्तः पूर्वं धनवान् आसीत् परं सः उदारतावशदानकारणात् च शीघ्रं दरिद्रो जातः। दरिद्रावस्थायां मित्राणाम् उपेक्षायाः कारणात् कटुः अनुभवः भवति। किन्तु दैन्येऽपि तस्य मनः भ्रष्टं न भवति। मैत्रेयः अस्य मित्रम्। सः विनोदप्रियः विपत्तौ अपि तस्य विश्वासपात्रम्।

शब्दार्थः– रूपवान्–सुन्दर। **परायणः**–तत्पर। **दैन्ये अपि**–दीनता में भी।

सरलार्थ– प्रस्तुत पाठ चारुदत्त नामक नाटक के प्रथम अङ्क से संकलित है। नाटक का नायक चारुदत्त है। वह उज्जयिनि का निवासी, सुन्दर, गुणवान्, संगीतकला का प्रेमी और परोपकार में तत्पर रहने वाला है।

चारुदत्त पहले धनवान् था पर वह उदारतावश दान करते रहने के कारण शीघ्र दरिद्र हो गया। उसे दरिद्र की अवस्था में मित्रों की अपेक्षा के कारण कड़वा अनुभव होता है किन्तु दीनता में भी उसका मन डांवाडोल नहीं होता। मैत्रेय इसका मित्र है। वह विनोदप्रिय है और विपत्ति में भी उसका विश्वासपात्र है।

(नान्यन्ते ततः प्रविशति सूत्रधारः)

सूत्रधारः किन्नु खलु अद्य प्रत्यूष एव गेहान्निष्कान्तस्य बुभुक्षया पुष्करपत्रपतितजलबिन्दू इव चञ्चलायेते इव मेऽक्षिणी। यावद् गेहं गत्वा जानामि किन्नु खलु संविधा विहिता न वेति। (परिक्रम्य) एतद् अस्माकं गृहम्। यावत् आर्यां शब्दापयामि। आर्ये! इतस्तावत्।

नटी (प्रविश्य) आर्य! इयमस्मि। आर्य दिष्ट्या खलु आगतोऽसि।

सूत्रधारः आर्ये! किम् अस्त्यस्माकं गेहे कोऽपि प्रातराशः।

नटी अस्ति, घृतं गुडो दधि तण्डुलाश्च सर्वमस्ति।

सूत्रधारः चिरं जीव, एवं शोभनानां भोजनानां दात्री भव। आर्ये! किमेतत् सर्वम् अस्माकं गेहेऽस्ति।

नटी नहि नहि, अन्तरापणे।

सूत्रधारः (सरोषम्) आः अनार्ये! एवं ते आशा छिद्यताम्। अहं पर्वताद् दूरमारोप्य पातितोऽस्मि।

नटी मा बिभीहि, मा बिभीहि। मुहूर्तकं प्रतिपालयतु आर्यः। सर्वं सज्जं भविष्यति। आर्य! अद्य ममोपवासः अस्ति। यदि आर्यस्यानुग्रहः स्यात् तर्हि अस्मादृशयोग्यं कञ्चिद् जनं निमन्त्रयितुम् इच्छामि।

सूत्रधारः (परिक्रम्य) कुत्र नु खलु दरिद्रं योग्यं जनं लभेय। (विलोक्य) एष आर्यचारुदत्तस्य वयस्यः आर्यमैत्रेयः इत एवागच्छति। यावद् उपनिमन्त्रयामि। (परिक्रम्य) आर्य! निमन्त्रितोऽसि। (निष्कान्तः)

(नेपथ्ये)

अन्यमन्यं निमन्त्रयतु भवान्। नाहं तावद् दरिद्रः।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— नान्यन्ते—नान्दी + अन्ते—नान्द्याः अन्ते, नान्दी के अन्त में। नान्दी पारिभाषिक शब्द है। नाटक विषयक पारिभाषिक शब्दों का परिचय **'राष्ट्रचिन्ता गरीयसी'** पाठ के अन्त में दिया गया है। तदनुसार **'नाटकस्य प्रारम्भे विघ्नविनाशाय स्तुतिः'**—अर्थात् नाटक के आरम्भ में विघ्नों को दूर करने के लिए की गई स्तुति को नान्दी कहते हैं।

प्रविशति—प्र √विश्, लट्, प्रथम पुरुषः, एकवचनम्, प्रवेशं करोति। **सूत्रधारः**—यह भी पारिभाषिक शब्द है, सूत्रं धारयति इति सूत्रधारः, व्यवस्थापकः। सूत्र का अभिप्राय है, नाटक का समस्तकार्यभार—प्रयागानुष्ठानम्, प्रयोगस्य, नाटकस्य अनुष्ठानम् कार्यभारः, कार्यजातम्, कार्यभार में 'बीज' नामक कथावस्तु की अर्थ-प्रकृति को भी सम्मिलित किया गया है। सूत्रधार नाटक की कथावस्तु के बीज की स्थापना भी करता है तथा रंगमञ्च के देवताओं की पूजा को वही करवाता है अतः सूत्रधार के विषय में ही कहा गया है—'नाटयस्य यदनुष्ठानं तत्सूत्रं स्यात् सबीजकम् रंगदैवतपूजाकृत सूत्रधार इति स्मृतः। मञ्च् सञ्चालनस्य सर्वम् उत्तरदायित्वम् सूत्रधारस्य एव भवति। मञ्च-सञ्चालन का पूरा उत्तरदायित्व सूत्रधार का ही होता है। प्रस्तुत पाठ महाकवि भासकृत 'चारुदत्तम्' की प्रस्तावना से लिया गया है। प्रस्तावना में सूत्रधार नटी अथवा पारिपार्श्विक के साथ वार्तालाप करता है तथा नाटक के बीज की स्थापना करता है। **गेहं**—गृहं, घर। **संविधा**—भोजनव्यवस्था। **विहिता**—वि + धा + क्त + टाप्, कृत्, की गई। **दिष्ट्या**—भाग्येन, भाग्य से। **तण्डुलाः**—अक्षताः, चावल। अन्तरापणे, विपणे, बाजार में। **पर्वतात् दूरमारोप्य**—अत्यन्त मनोरथात् स्थानात् चेति वा, पर्वत से भी ऊँचे उठाकर। **बिभीह**—भी, लोट्। भयं मा कुरु, डरो मत। **छिद्यताम्**—छिद्, विधिलङ्, प्रथम पुरुष, एकवचनम्। नष्टा भवेत्, नष्ट हो जावे। **पुष्करे**—कमलपत्रे पतिते + जलबिन्दु इव चञ्चले, कमल के पत्ते पर पड़ी पानी की बूंदों के समान चपल।

प्रसंग— यह नाट्यांश पाठ्यपुस्तक के 'दारिद्रये दुर्लभं सत्त्वम्' पाठ से लिया गया है। यह नाट्यांश महाकवि भास रचित नाटक 'चारुदत्त' के प्रथम अङ्क से सङ्कलित है। इस भाग में प्रस्तावना भाग को सम्पादित किया गया है जिसमें विदूषक के माध्यम से सूत्रधार नायक चारुदत्त की विपन्नावस्था का सङ्केत करता है।

सरलार्थ— **(नान्दी हो जाने के पश्चात् सूत्रधार प्रवेश करता है।)**

सूत्रधार – (प्रमुख नट) पता नहीं क्यों आज प्रातः काल ही घर से निकले हुए भूख के कारण मेरी दोनों आँखें कमल के पत्ते पर गिरी हुई पानी की दो बूँदों के समान चञ्चल हो रही है। अतः घर जाकर पता करता हूँ कि कोई व्यवस्था है या नहीं। (घूमकर) यह हमारा घर है। तो मैं आर्या (गृहस्वामिनी) को पुकारता हूँ। हे आर्ये! इधर तो आइए।

नटी – (प्रवेश करके) पतिदेव (आर्य)! मैं आ गई हूँ। आर्य, प्रसन्नता है कि आप आ गये हैं।

सूत्रधार – हे देवि (आर्ये)! क्या हमारे घर में कुछ नाश्ता है?

नटी – है, घी, गुड़ दही तथा चावल सब है।

सूत्रधार – दीर्घकाल तक जीओ (चिरंजीव)! इसी तरह सुन्दर भोंजने देनेवाली बनो। हे देवि (आर्ये)। क्या यह सब हमारे घर में है?

नटी – नहीं, नहीं, बाजार में।

सूत्रधार – (क्रोधपूर्वक) हा दुष्टे (अनार्ये)! इसी प्रकार तेरी आशा भंग हो जाए। मैं दूर तक चढ़ाकर पर्वत से गिरा दिया गया हूँ।

नटी – भय मत करो, डरो मत। स्वामी क्षण भर प्रतीक्षा करो। सब तैयार हो जाएगा। स्वामिन्! आज मेरा व्रत है। यदि स्वामी (आर्य) की कृपा हो तो हमारे योग्य किसी व्यक्ति को बुलाना चाहती हूँ।

सूत्रधार – (घूमकर)—कहाँ से मैं दरिद्र व्यक्ति को प्राप्त करूँ? (देखकर) यह आर्य चारुदत्त का मित्र आर्य मैत्रेय इधर ही आ रहा है। तो इसे ही पास जाकर निमन्त्रित करता हूँ। (घूमकर) आर्य! तुम्हें निमन्त्रण है। (निकल जाता है) (नेपथ्य में) आप किसी और को निमन्त्रित कर लें। मैं उतना दरिद्र नहीं हूँ।

• • • • •

(ततः प्रविशति विदूषकः)

विदूषकः **ननु भणामि, अन्यमन्यं निमन्त्रयतु भवान्। किं भणसि- "सम्पन्नम् अशनम् अशितव्यं भविष्यतीति।" भणामि, कार्यान्तरे व्यस्तः। अथवा मयापि मैत्रेयेण परस्य आमन्त्रणकानि अभिलषणीयानि। योऽहं तत्रभवतः चारुदत्तस्य गेहेऽहोरात्रम् आकण्ठमात्रम् अशित्वा दिवसान् अनयम्; स एव इदानीमहं तत्रभवतः चारुदत्तस्य दरिद्रतया पारावतैः समम् अन्यत्र भुक्त्वा तस्यावासमेव गच्छामि।**

पुनरपि सन्तुष्टोऽहम्। तदैव तत्रभवतः चारुदत्तस्य देवकार्यकारणात् गृहीतानि सुमनसः अन्तरीयवासः च। (परिक्रम्यावलोक्य)

एष तत्रभवान् चारुदत्तः यथाविभवं गृहदैवतानि अर्चयन् इत एवावगच्छति। यावद् एनमुपसर्पामि।

शब्दार्थः, **पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— अशनम्**—अश् + ल्युट्, भोजनम्। **आशितव्यम्**—अश् + त्वयत्, भोजनं करणीयम्। **आशित्वा**—अश् + क्तवा, भोजन कृत्वा। **अहोरत्रम्**—दिवाच निशाच, दिन-रात। **पारावतैः**—कपोतैः, कबूतरों से। **सत्त्वम्**—सत्त्वगुणयुक्तं मनः, सत्त्वशाली मन। **भणामि**—भण् + लट्, उत्तम पुरुषः, एकवचनम्। वदामि, बोलता हूँ। **उपसर्पामि**—उप + सृप, लट्, उत्तम पुरुषः, एकवचनम् समीपं गच्छामि, पास जाता हूँ। **यथाविभवम्**—ऐश्वर्यानुसारम्, धन की सामर्थ्य के अनुसार।

प्रसंग— प्रस्तुत नाट्यांश 'दारिद्रये दुर्लभं सत्त्वम्' पाठ से लिया गया है। यह पाठ महाकवि भास विरचित 'चारुदत्तम्' नाटक से सङ्कलित व सम्पादित है। प्रस्तुत अंश में विदूषक सूत्रधार से निमन्त्रण पाकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहा है।

सरलार्थ— (उसके बाद विदूषक प्रवेश करता है)

विदूषक – निश्चय ही मैं कहता हूँ, "किसी अन्य को आप निमन्त्रण देवें। क्या कहते हो? समृद्ध भोजन खाने का होगा। मैं कहता हूँ, "मैं दूसरे काम में व्यस्त (संलग्न) हूँ। अथवा मुझे मैत्रक को भी दूसरों के निमन्त्रणों की इच्छा करनी चाहिए। मैं तो आदरणीय श्रीमान् चारुदत्त के घर में दिन-रात गले तक भरपूर भोजन करके दिवस बिताया करता था। वही मैं अब उन आदरणीय चारुदत्त की दरिद्रता के द्वारा कबूतरों के समान, दूसरी जगह खाकर उनके आवास की ओर जा रहा हूँ। फिर भी मैं सन्तुष्ट हूँ। तभी आदरणीय चारुदत्त की देवपूजा के कार्य के कारण से मेरे द्वारा फूल और चोला लाया गया है।

(घूमकर, देखकर)

ये आदरणीय चारुदत्त है जो अपनी सम्पदा के अनुसार गृहदेवताओं का पूजन करते हुए इधर ही आ रहे हैं। तो मैं इनके पास जाता हूँ।

• • • • •

(ततः प्रविशति चारुदत्तो, विदूषकः, चङ्गेरिकाहस्ता चेटी च)

चारुदत्तः **(दीर्घं निःश्वस्य) भोः दारिद्र्यं खल नाम मनस्विनः पुरुषस्य सोच्छ्वासं मरणम्।**

विदूषकः　अलम् इदानीं भवान् अतिमात्रं सन्तप्तुम्। दानेन विपन्नविभवस्ये, बहुलपक्षचन्द्रस्य ज्योत्स्नापरिक्षय इव भवतः रमणीयोऽयं दरिद्रभावः।

चारुदत्तः　न खल्वहं नष्टां श्रियम् अनुशोचामि। गुणरसज्ञस्य तु पुरुषस्य व्यसनं दारुणतरं मां प्रतिभाति। कुतः

सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते
यथान्धकारादिव दीपदर्शनम्।
सुखात्तु यो याति दशां दरिद्रतां
स्थितः शरीरेण मृतः स जीवति।। 1।।

अन्वयः — यथा अन्धकारात् दीपदर्शनम् शोभते
इव दुःखानि अनुभूय सुखम् हि शोभते।
तु यः सुखात् दरिद्रतां दशां याति,
सः शरीरेण स्थितः मृतः जीवति।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— **चङ्गेरिकाहस्ता**—चङ्गेरिका हस्ते यस्या सा, जिसके हाथ में फूल रखने की डालिया हो वह (सेविका, चेटी)। **चङ्गेरिका**—पुष्पाधानपात्तविशेषयुक्त, वह टोकरी जो पूजा के फूल रखने के लिए बनाई जाती है। **मनस्विनः**—उच्चमनसः, ऊँचे मन वाले के। **सोच्छ्वासम्**—उच्छ्वासेन सहा उच्छ्वास युक्तम्, लम्बी साँस (आहों) से युक्त। **सन्तप्तुम्**—सम् + तप् + तुमुन्, दुःखी भवितुम्, सन्ताप करने से। **अलम्**—अव्ययः, निषेधार्थे, बस करें। **बहुपक्षचन्द्रस्य**—कृष्णपक्षस्य चन्द्रस्य, षष्ठी तत्पुरुषः। **ज्योत्सनापरिक्षयः**—ज्योत्स्नाया परिक्षयः, चन्द्रकलायाः क्षय, चन्द्रमा की कला के क्षय के। **श्रेयम्**—श्री, द्वितीया विभक्तिः, एकवचनम्, सम्पदम्, सम्पत्ति को। **गुणरसज्ञस्य**—गुणः च रसः च इति तस्य गुणरसौ तौ जानाति गुणारसज्ञः तस्य, अनुभूत विभवफल सारस्य, योग्यता आदि गुणों एवं करुणा आदि रसों के अनुभवी सहृदय पुरुष की।

प्रसंग— प्रस्तुत नाट्यांश 'दारिद्रये दुर्लभं सत्त्वम्' पाठ से लिया गया है। मूलतः यह महाकवि भासकृत 'चारुदत्त' नाटक के प्रथम अङ्क से लिया गया है। इसमें चारुदत्त व विदूषक दारिद्य के सम्बन्ध में वार्तालाप करते हैं। विदूषक चारुदत्त की सान्त्वना देता है।

सरलार्थ—**(उसके बाद चारुदत्त, विदूषक और हाथ में चङ्गेरी लिए चेटी प्रवेश करते हैं।)**

चारुदत्त — (गहरी लम्बी साँस लेकर) अरे, मनस्वी (मननशील) पुरुष के लिए निश्चय ही दरिद्रता आहों से भरी हुई तो मृत्यु है।

विदूषक — अब आप बहुत अधिक सन्ताप न करें।

दान करने के कारण धन को नष्ट करने वाले आपकी यह दरिद्रता कृष्ण-पक्ष के चन्द्रमा की चाँदनी की क्षीणता के समान सुन्दर है। (दूज का चाँद अत्यन्त रमणीय होता है, चन्द्रमा प्रत्येक कला का दान करता हुआ अन्त में अत्यन्त क्षीण होता है तथा अमावस्या के बाद जब वह दिखाई देता है तो लोग उसकी पूजा करते हैं।)

चारुदत्त — निश्चित ही मैं लक्ष्मी के नष्ट हो जाने का शोक नहीं करता। गुणों के रसिक पुरुष की विपत्ति मुझे अत्यन्त दारुण और असहनीय प्रतीत होती है। क्योंकि—

दुःखों का अनुभव कर चुकने के पश्चात् ही सुख का अनुभव उसी प्रकार आनन्दमय लगता है जिस प्रकार अन्धेरे के बाद दीपक का प्रकाश अच्छा लगता है (किन्तु) जो व्यक्ति सुख को भोगकर दुःख की अवस्था को प्राप्त करता है, वह देह में स्थित होते हुए भी मरे हुए के समान जीवनयापन करता है।

* * * * *

विदूषकः　किं भवान् अर्थविभवं चिन्तयति!

चारुदत्तः　सखे! 'दानं श्रेयस्करम्' इति प्रत्ययादेव ममार्थाः क्षीणाः जाताः। अतः

सत्यं न मे धनविनाशगता विचिन्ता
भाग्यक्रमेण हि धनानि पुनर्भवन्ति।
एतत्तु मां दहति नष्टधनश्रियो मे
यत् सौहृदानि सुजने शिथिलीभवन्ति।। 1।।

निर्वैरा विमुखी भवन्ति सुहृदः स्फीता भवन्त्यापदः।
पापं कर्म च यत् परैरपि कृतं तत्तस्य सम्भाव्यते।।2।।

अन्वयः (1)– **सत्यम् (एतत् यत्) धनविनाशगता विचित्रा मे न अस्ति, हि धनानि भाग्यक्रमेण पुनः भवन्ति। तु एतत् मां दहति यत् नष्टधनश्रियः मे सौहृदानि सुजने शिथली भवन्ति।**

अन्वयः (2)–निर्वैराः सुहृदः विमुखीभवन्ति, आपदः स्फीताः भवन्ति, पापं कर्मच यत् परैः अपि कृतम् तत् तस्य सम्भाव्यते।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च– अर्थविभवम्–अर्थानां विभवः, तम्, दारिद्रयम्, दरिद्रता को, विपत्ति को। **सौहृदानि**–कुटुम्बानां मैत्री, पारिवारिक मैत्रीभाव। **सुजने**–सज्जने, सज्जन व्यक्ति में (भी)। **सामान्यजनैः**–साधारण जन के द्वारा। **प्रत्यमात्**–विश्वासघात्, विश्वास के कारण। **शत्रुभिः**–शत्रुओं के द्वारा। **नष्टधराश्रियः**–नष्टा धनश्रीः यस्य एव भूतस्य। नष्टधनस्य, धन नष्ट हुए की।

भावार्थ– धनस्य विनाशस्य चिन्ता चारुदत्तस्य न अस्ति। यदा पुनः भाग्योदयः भविष्यति तदा धनं पुनर्भविष्यति। किन्तु धनहीनस्य मित्राणां प्रेमभावं शिथिलं दृष्ट्वा चारुदत्तस्य हृदयं दग्धं भवति (सन्तप्यते)। मित्राणि पराङ्मुखानि भवन्ति। विपदः वर्धन्ते (परेषां पापानि तस्योपरि उत्पतन्ति इति महत् चिन्ताकारणम् अस्ति)।

प्रसंग– यह नाट्यांश चारुदत्त तथा विदूषक की वार्ता के रूप में है तथा मूलतः यह महाकवि भासकृत 'चारुदत्त' नाटक के प्रथम अंश से लिया गया है। पाठ्यपुस्तक के 'दारिद्रये दुर्लभं सत्त्वम्' पाठ से लिया गया है।

सरलार्थ–

विदूषक – आप धन-सम्पत्तियों का चिन्तन ही किसलिए करते हैं? (अथवा क्या आप धन-सम्पत्तियों की चिन्ता करते हैं?)

चारुदत्त – मित्र! "दान देना कल्याणकारक होता है" इस पर विश्वास करने के कारण ही मेरे सब धन नष्ट हो गए हैं। अतः यह सत्य (वास्तविकता) है कि जो धन समाप्त हो गए हैं, उनकी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। भाग्य के परिवर्तन क्रम से निश्चय ही धन पुनः पैदा हो जाते हैं। किन्तु यह बात मुझको जला रही है कि इस धन तथा श्री (लक्ष्मी, शोभा) के नष्ट होने से मेरे मित्रों के प्रेमभाव मुझ सज्जन के प्रति मन्द पड़ रहे हैं। और भी–

(निर्धनता के कारण) शत्रुता से रहित मित्र मुझसे पराङ्मुख हो रहे हैं। मेरी विपत्तियाँ बढ़ रही हैं तथा दूसरों के द्वारा किया गया पापकर्म भी उसका (जिसने उसे नहीं किया) ही समझ लिया जाता है।

• • • • •

विदूषकः **वसन्ते यथा शरस्तम्बस्य अङ्कुराद् निःसरन्ति तथैव धनविनाशदुःखस्य पुनः पुनः चिन्त्यमानस्य नानाविधाः चिन्ताङ्कुराः प्रादुर्भवन्ति। तदलं भवतः सन्तापेन।**

चारुदत्तः **वयस्य! किमर्थं सन्तापं करिष्ये। यस्य मम-**

विभवानुवशा भार्या मातु समदुःखसुखो भवान्।
सत्त्वं च न परिभ्रष्टं यद् दरिद्रेषु दुर्लभम्।।

अन्वयः– भार्या विभव-अनुवशा (अस्ति) भवान् समदुः खसुखः (अस्ति), (तत्) सत्त्वं च परिभ्रष्टं न (अस्ति), यत् दरिद्रेषु दुर्लभम् अस्ति।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च– शरस्तम्बस्य–तृणसमूहस्य, विशिष्टतृणानाम् सरकण्डों के। **विभवानुवशा**–(वि.) (स्त्री.) विभववशात् अनुवशा, तत्पुरुषसमासः। **धनवशात् अनुकूलवकार्यकारिणी (भार्या)**–विपुल धन के कारण सदा अनुकूल रहने वाली स्त्री। **समदुःखसुखः**–दुःखं च सुखं च, द्वन्द्व समासः, सुखदुःखयोः समान भावः यस्य सः, दुःख-सुख में समान भाव रखने वाला। समे दुःखसुखे यस्य सः। **सत्त्वम्**–(नपुं.) मनः, (सत्त्वगुणयुक्त) सत्त्वशालीमन। **परिभ्रष्टम**–विचलितम्, पथभ्रष्ट हुआ।

भावार्थ– वही मनुष्य विपन्न अवस्था में सन्ताप होता है जिसका मनोबल नष्ट हो जाता है जिसकी धर्मपत्नी उसके अनुकूल नहीं रहती और जिसके पास दुःख-सुख में समान व्यवहार करनेवाली कोई मित्र नहीं होती।

प्रसंग– प्रस्तुत नाट्यांश पाठ्यपुस्तक के 'दारिद्रये दुर्लभं सत्त्वम्' पाठ से तथा मूलतः महाकवि भासकृत 'चारुदत्तम्' नाटक के प्रथम अङ्क से सङ्कलित है। इस अंश में चारुदत्त दरिद्रता में भी अपनी अनुकूल भार्या, सहयोगी मित्र तथा सत्त्वशील मन के कारण स्वयं को भाग्यशाली मानता है।

सरलार्थ—

विदूषक — वैभव के कारण नष्ट हुए दुःख के विषय में चिन्ता करते रहने वाले मनुष्य के मन में चिन्ता के नाना प्रकार के अंकुर ठीक वैसे ही उत्पन्न होते रहते हैं जै[illegible]न्त में सरकण्डे के अंकुर से नए-नए अंकुर निकलते रहते हैं। अतः आप सन्ताप न करें।

चारुदत्त — मित्र! मैं किसलिए सन्ताप करूँगा। जिसकी, मेरी पूर्व वैभव के अनुसार ही वश में रहनेवाली धर्मपत्नी है और दुःख-सुख में समान रहनेवाले आप हैं, तथा जिसका मनोबल भी, जो दरिद्रों के पास दुर्लभ होता है, नष्ट नहीं हुआ है, वह मैं सन्ताप किस कारण से करूँगा।

अनुप्रयुक्त-व्याकरणम्

पाठाधारिताः सन्धिविच्छेदाः

नान्द्यन्ते	=	नान्दी + अन्ते
गेहान्निष्क्रान्तस्य	=	गेहात् + निष्क्रान्तस्य
एतद् अस्माकम्	=	एतत् + अस्माकम्
इतस्तावत्	=	इतः + तावत्
अस्त्यस्माकम्	=	अस्ति + अस्माकम्
कोऽपि	=	कः + अपि
गुडोदधि	=	गुडः + दधि
गेहेऽस्ति	=	गेहे + अस्ति
अन्तरापणे	=	अन्तः + आपणे
पातितोऽस्मि	=	पातितः + अस्मि
आर्यस्यानुग्रहः	=	आर्यस्य + अनुग्रह
एष चारुदत्तस्य	=	एषः + चारुदत्तस्य
एवागच्छति	=	एव + आगच्छति
निमन्त्रितोऽसि	=	निमन्त्रितः + असि
तावद् दरिद्रः	=	तावत् + दरिद्रः
कार्यान्तरे	=	कार्य + अन्तरे
मयापि	=	मया + अपि
गेहेऽहोरात्रम्	=	गेहे + अहोरात्रम्
तस्यावासमेव	=	तस्य + आवासम् + आवासम्
सन्तुष्टोऽहम्	=	सम + तुष्टः + अहम्
परिक्रम्यावलोक्य	=	परिक्रम्य + अवलोकय
एनमुपसर्पाति	=	एनम् + उपसर्पामि
चारुदत्तो विदूषकः	=	चारुदत्तः + विदूषकः
परिक्षय इव	=	परिक्षयः + इव
दुःखान्यनुभूय	=	दुःखानि + अनुभूय
यथान्धकारादिव	=	यथा + अन्धकारात् + इव
नष्टधनश्रियो मे	=	नष्टधनश्रियः + मे
निर्वैराविमुखीभवन्ति	=	निः + वैराः + विमुखीभवन्ति
प्रादुर्भवन्ति	=	प्रादुः + भवन्ति
प्रत्यूष एव	=	प्रत्यूषे + एव
मेऽक्षिणी	=	मे + अक्षिणी
किन्नु	=	किम् + नु
इयमस्मि	=	इयम् + अस्मि
आगतोऽसि	=	आगतः + असि
प्रातराशः	=	प्रातः + आशः
तण्डुलाश्च	=	तण्डुलाः + च
सर्वमस्ति	=	सर्वम् + अस्ति
दूरमारोप्य	=	दूरम् + आरोप्य
ममोपवासः	=	मम + उपवासः
कञ्चित्	=	कम् + चित्
इत एव	=	इतः + एव
यावद् उपनिमन्त्रये	=	यावत् + उपनिमन्त्रये
निष्क्रान्तः	=	निस् + क्रान्तः
अन्यमन्यम्	=	अन्यम् + अन्यम्
व्यस्तः	=	वि + अस्तः
योऽहम्	=	यः + अहम्
इदानीमहम्	=	इदानीम् + अहम्
पुनरपि	=	पुनः + अपि
तदैव	=	तदा + एव
एवागच्छति	=	एव + आगच्छति
इतएव	=	इतः + एव
सोच्छ्वासं	=	स + उत् + श्वासम्
रमणीयोऽयम्	=	रमणीयः + अयम्
खल्वहम्	=	खलु + अहम्
प्रत्ययादेव	=	प्रत्ययात् + एव
पुनर्भवन्ति	=	पुनः + भवन्ति
भवन्त्यापदः	=	भवन्ति + आपदः
परैरपि	=	परैः + अपि

समदुःखसुखो भवान्	= समदुःखसुखः + भवान्	तथैव	= तथा + एव
विभवानुवशा	= विभव + अनुवशा	यद् दरिद्रेषु	= यत् + दरिद्रेषु

पाठाधारिताः समासविग्रहाः

समस्तपदानि		विग्रहाः	समास-नाम
सूत्रधारः		सूत्रमुधारयति इति	उपपद तत्पुरुषः
नान्द्यन्ते	–	नान्द्याः अन्तः, तस्मिन्	षष्ठी तत्पुरुषः
पुष्करपत्र-पतित	–	पुष्करस्य पत्रम्	षष्ठी तत्पुरुषः
जलबिन्दू	–	तस्मिन् पतितः	सप्तमी तत्पुरुषः
	–	जलस्य बिन्दुः जलबिन्दुः	षष्ठी तत्पुरुषः
	–	पुष्करपत्रपतितः जलबिन्दुः, तौ	कर्मधारयः
सरोषम्		रोषेण सहितं यथा स्यात् तथा	बहुव्रीहिः
अनार्ये		न आर्या, अनार्या, तत्सम्बुद्धौ	नञ तत्पुरुषः
अस्मादृशयोग्यम्		अस्मादृशानां योग्यम्	षष्ठी तत्पुरुषः
आर्यचारुदत्तस्य		आर्यः चासौ चारुदत्तः, तस्य	कर्मधारयः
आर्यमैत्रेयः		आर्यः चासौ मैत्रेयः	कर्मधारयः
कार्यान्तरे		अन्यत् कार्यम् कार्यान्तरम्, तस्मिन्	कर्मधारयः
अहोरात्रम्		अहः च रात्रिः च एतयोः समाहारः	द्वन्द्वः
देवकार्यकारणत्		देवानां कार्यस्य कारणम्, तस्मात्	षष्ठी तत्पुरुषः
अन्तरीयवासः		अन्तरीयम् वासः	कर्मधारयः
यथाविभवम्		विभवम् अनतिक्रम्य	अव्ययीभावः
गृहदैवतानि		गृहस्य दैवतानि	षष्ठी तत्पुरुषः
चङ्गेरिकाहस्ता		चङ्गेरिका हस्तयोः यस्याः सा	बहुव्रीहिः
सोच्छ्वासम्		उच्छ्वासेन सह विद्यमानम्	बहुव्रीहिः
विपन्नविभवस्य		विपन्नः विभवः यस्य तस्य	बहुव्रीहिः
बहुलपक्षचन्द्रस्य		बहुलपक्षस्य चन्द्रः, तस्य	षष्ठी तत्पुरुषः
ज्योत्स्नापरिक्षयः		ज्योत्स्नायाः परिक्षयः	षष्ठी तत्पुरुषः
दरिद्रभावः		दरिद्रस्य भावः	षष्ठी तत्पुरुषः
गुणरसज्ञस्य	–	गुणानां रसः गुणरसः	षष्ठी तत्पुरुषः
	–	गुणरसं जानाति इति तस्य	उपपद तत्पुरुषः
दीपदर्शनम्		दीपस्य दर्शनम्	षष्ठी तत्पुरुषः
धनविनाशगता	–	धनस्य विनाशः धनविनाशः	षष्ठी तत्पुरुषः
	–	धनविनाशं गता	द्वितीया तत्पुरुषः
भाग्यक्रमेण		भाग्यस्य क्रमः तेन	षष्ठी तत्पुरुषः
नष्टधनश्रियः	–	नष्टे धनश्रियौ यस्य तस्य	बहुव्रीहिः
	–	अथवा नष्टा धनस्य श्रीः यस्य तस्य	बहुव्रीहिः
	–	अथवा नष्टे धनं श्रीः, च यस्य तस्य	बहुव्रीहिः
	–	नष्टा धनश्रीः यस्य तस्य	बहुव्रीहिः
निर्वैराः		निर्गतम् वैरं येभ्यः ते	बहुव्रीहिः

शरस्तम्बरस्य		शरस्य स्तम्बरः, तस्य	षष्ठी तत्पुरुषः
धनविनाशदुःखस्य	–	धनस्य विनाशः धनविनाशः	षष्ठी तत्पुरुषः
	–	धनविनाशेन दुःखम्, तस्य	तृतीयातत्पुरुषः
चिन्ताङ्कुराः		चिन्तायाः अङ्कुराः	षष्ठी तत्पुरुषः
विभवानुवशा		विभवेन अनुवशा	तृतीया तत्पुरुषः
समदुःखसुखः	–	दुःखम् च सुखम् दुःखसुखे	द्वन्द्व
	–	समे दुःखसुखे यस्य सः	बहुव्रीहिः

अनुप्रयोगस्य प्रश्नोत्तराणि

प्रश्न 1. एतानि पदानि उच्चैः उच्चरत तदनुसारं चाभिनयं कुरुत—

प्रविश्य, परिक्रम्यावलोक्य, चिरंजीव, सरोषम्, दीर्घ निःश्वस्य, निष्क्रान्तः

उत्तरम्—

प्रविश्य	–	मञ्च पर प्रवेश करने का अभिनय करें।
परिक्रम्यावलोक्य	–	मञ्च पर चारों ओर घूमने तथा किसी को देखने का अभिनय करें।
चिरंजीव	–	मञ्च पर किसी को दीर्घायु का आशीर्वाद दें।
सरोषम्	–	क्रोधपूर्वक वार्तालाप का अभिनय करें।
दीर्घ निःश्वस्य	–	गहरी लम्बी आह भरने का अभिनय करें।
निष्क्रान्तः	–	मञ्च से जाने का अभिनय करें।

प्रश्न 2. समानार्थकपदानां मेलनं क्रियताम्—

'अ'	'आ'
(i) पुष्करम्	(क) नयने
(ii) प्रत्यूषे	(ख) दिवानिशम्
(iii) अक्षिणी	(ग) मित्रम्
(iv) अहोरात्रम्	(घ) कमलम्
(v) वयस्यः	(ङ) प्रातःकाले

उत्तरम्—

'अ'	'आ'
(i) पुष्करम्	(घ) कमलम्
(ii) प्रत्यूषे	(ङ) प्रातःकाले
(iii) अक्षिणी	(क) नयने
(iv) अहोरात्रम्	(ख) दिवानिशम्
(v) वयस्यः	(ग) मित्रम्

प्रश्न 3. विशेषण-विशेष्यमेलनं क्रियताम्—

'क'	'ख'
(i) मनस्विनः	(क) अशनम्
(ii) शोभनानाम्	(ख) जनम्
(iii) सम्पन्नम्	(ग) भार्या
(iv) दरिद्रं	(घ) पुरुषस्य
(v) विभवानुवशा	(ङ) भोजनानाम्

उत्तरम्—

'क'	'ख'
(i) मनस्विनः	(घ) पुरुषस्य
(ii) शोभनानाम्	(ङ) भोजनानाम्
(iii) सम्पन्नम्	(क) अशनम्
(iv) दरिद्रं	(ख) जनम्
(v) विभवानुवशा	(ग) भार्या

प्रश्न 4. सन्धिः क्रियताम् परिवर्तनं च निर्दिशत—

(क)	अस्ति	+	अस्माकम्	=	....	इ → य्
(ख)	मम	+	उपवासः	=	....	....
(ग)	मया	+	अपि	=	....	....
(घ)	आगतः	+	असि	=	....	....
(ङ)	तण्डुलाः	+	च	=	....	....
(च)	गेहात्	+	निष्कान्तस्य	=	....	....

उत्तरम्—

(क)	अस्ति	+	अस्माकम्	=	अस्त्यस्माकम्	इ → य्
(ख)	मम	+	उपवासः	=	ममोपवासः	आ + उ → ओ
(ग)	मया	+	अपि	=	मयापि	आ + उ → आ
(घ)	आगतः	+	असि	=	आगतोऽसि	अः → ओ, परवर्ती अ लोप
(ङ)	तण्डुलाः	+	च	=	तण्डुलाश्च	: → श्
(च)	गेहात्	+	निष्कान्तस्य	=	गेहान्निष्कान्तस्य	त् → न्

प्रश्न 5. अधः प्रदत्तविग्रहपदानां समस्तपदानि पाठादेव चित्वा लिखत—

(i) पुष्करस्य पत्रे पतिती जलस्य बिन्दू इव = ...

(ii) दीपस्य दर्शनम् = ...

(iii) ज्योत्स्नायाः परिक्षयः = ...

(iv) गृहस्य दैवतानि = ...

(v) रोषेण सह = ...

(vi) नष्टा धनश्रीः यस्य एवं भूतस्य = ...

(vii) अहः च रात्रिः च तयोः समाहारः = ...

उत्तरम्—

(i) पुष्करस्य पत्रे पतिती जलस्य बिन्दू इव = पुष्कर पत्रपतितजल बिन्दू इव

(ii) दीपस्य दर्शनम् = दीपदर्शनम्

(iii) ज्योत्स्नायाः परिक्षयः = ज्योत्स्नापरिक्षयः

(iv) गृहस्य दैवतानि = गृह दैवतानि

(v) रोषेण सह = सरोषम्

(vi) नष्टा धनश्रीः यस्य एवं भूतस्य = नष्टधनश्रियस्य

(vii) अहः च रात्रिः च तयोः समाहारः = अहोरात्रम्

प्रश्न 6. प्रकृति-प्रत्यययोगेन पदेन वाक्यपूर्तिं कुरुत—

(क) आर्य! दिष्ट्या खलु (आ + गम् + क्त)......................असि।

(ख) सम्पन्नम् अशनम् (अश् + तव्यत्)..........................।

(ग) भवतः (रम् + अनीयर्)..................................दरिद्रभावः।

(घ) (अर्च् + शतृ)........................चारुदत्तः गृहदैवतानि.....................आगच्छति।

(ङ) सुखात् परं (दरिद्र + तल्)..........................दुःखदा भवति।

(च) अहं गृहं (प्र + विश् + ल्यप्)........................जानामि भोज्य-व्यवस्थाम्।

उत्तरम्— (क) आर्य! दिष्ट्या खलु **आगतः** असि।

(ख) सम्पन्नम् अशनम् **अशितव्यम्**।

(ग) भवतः **रमणीयः** दरिद्रभावः।

(घ) **अर्चयन्** चारुदत्तः गृहदैवतानि **इतएव** आगच्छति।

(ङ) सुखात् परं **दरिद्रता** दुःखदा भवति।

(च) अहं गृहं **प्रविश्य** जानामि भोज्य-व्यवस्थाम्।

प्रश्न 7. अधोलिखितेषु वाक्येषु कर्तृक्रियान्वितिः क्रियताम्

(i) अहम् त्वाम् निमन्त्रयितुम्..........................। (इच्छसि/इच्छामि)

(ii) मैत्रेयः इत एव ....। (आगच्छति/आगच्छन्ति)

(iii) भवान् क्षणमात्रं ....। (प्रतिपालय/ प्रतिपालयतु)

(iv) धनानि श्रमेण पुनः ....। (भवन्ति/भवति)

(v) मित्र! अहं किमर्थं सन्तापं..............................। (करिष्यसे/करिष्ये)

उत्तरम्— *(i)* अहम् त्वाम् निमन्त्रयितुम् **इच्छामि**।

(ii) मैत्रेयः इत एव **आगच्छति**।

(iii) भवान् क्षणमात्रं **प्रतिपालयतु**।

(iv) धनानि श्रमेण पुनः **भवन्ति**।

(v) मित्र! अहं किमर्थं सन्तापं **करिष्ये**।

प्रश्न 8. रेखाङ्कितपदेषु उपपदविभक्तिं तत्कारणं च निर्दिशत—

(क) अहम् पारावतैः समम् यत्र-तत्र गच्छामि।.........................

(ख) अलं भवतः संतोपन। ....

(ग) सत्त्वं च न परिभ्रष्टं यद् दरिद्रेषु दुर्लभम्।.........................

उत्तरम्— (क) तृतीया विभक्तिः। समम् के योग में तृतीया विभक्ति होती है।

(ख) तृतीया विभक्तिः। निषेध अर्थ में अलम् के योग में तृतीया विभक्ति होती है।

(ग) सप्तमी विभक्तिः। अधिकरण कारक मे सप्तमी विभक्ति होती है।

प्रश्न 9. एतेषु सर्वनामपदानि अव्ययपदानि च पृथक्कृत्य लिखत—

अद्य, प्रत्यूषे, मम, अलम्, तव, इदम्, इदानीम्, भवान्।..........................

उत्तरम्— (क) **सर्वनामपदानि**—मम, तव, इदम्, भवान्।

(ख) **अव्ययपदानि**—अद्य, प्रत्यूषे, अलम्, इदानीम्।

प्रश्न 10. प्रसङ्गानुसारं रेखाङ्कितपदानां शुद्धम् अर्थं चित्वा लिखत—

(क) संविधा विहिता न वेति गेहं गत्वा जानामि। .... (संविधानम्/भोजनम्/भोज्यव्यवस्था)

(ख) बहुलपक्षचन्द्रस्य ज्योत्स्नापरिक्षय इव रमणीयः दरिद्रभावः। .... (बहवः पक्षाः/कृष्णपक्षस्य/बहूनां पक्षे)

(ग) पापं कर्म च यत् परैरपि कृतं तत्तस्य सम्भाव्यते। .... (श्रेष्ठैः/शत्रुभिः/सामान्यजनैः)

(घ) सत्त्वं च न परिभ्रष्टं यद् दरिद्रेषु दुर्लभम्। ....

(मनः/सत्त्वोगुणः/बलम्)

उत्तरम्— (क) संविधा ← शुद्धार्थः → भोज्य व्यवस्था

(ख) बहुलपक्ष ← शुद्धार्थः → कृष्णपक्षस्य

(ग) परैरपि ← शुद्धार्थः → शत्रुभिः (अपि)

(घ) सत्त्वं ← शुद्धार्थः → मनः

प्रश्न 11. प्रश्नानाम् उत्तराणि संस्कृतभाषया लिखत—

(क) सूत्रधारः रङ्गमञ्चे कदा प्रविशति? ....

(ख) सूत्रधारस्य अक्षिणी केन कारणेन चञ्चलायेते? ....

(ग) विदूषकस्य किं नाम आसीत्? ....

(घ) चारुदत्तः कीदृशस्य पुरुषस्य दारिद्र्यं दारुणतरं मन्यते स्म? ....

(ङ) चारुदत्तस्य दरिद्रभावः किमिव रमणीयो भवति। ....

(च) सुखं कदा शोभते। ....

(छ) दरिद्रेषु किम् किम् दुर्लभं मन्यते। ....

(ज) अयं पाठः कस्माद् ग्रन्थाद् उद्धृतः कश्च तस्य लेखकः? ....

उत्तरम्— (क) सूत्रधारः रङ्गमञ्चे नान्धन्ते प्रविशति।

(ख) सूत्रधारस्य अक्षिणी बुभुक्षया चञ्चलायेते।

(ग) विदूषकस्य नाम मैत्रेयः आसीत्।

(घ) चारुदत्तः गुणरसज्ञस्य पुरुषस्य दारिद्र्यं दारुणतरं मन्यते स्म।

(ङ) चारुदत्तस्य दरिद्रभावः बहुलचन्द्रस्य ज्योत्स्नापरिक्षय इव रमणीयो भवति।

(च) सुख दुःखानि अनुभूय शोभते।

(छ) दरिद्रेषु विभवानुवशा भार्या, समदुःखसुखं मित्रं, सत्त्वं च दुर्लभानि मन्यते।

(ज) अयं पाठः चारुदत्तात् नाटकग्रन्थात् उद्धृतः, महाकवि भासश्च तस्य लेखकः।

प्रश्न 12. अत्र कः कम् प्रति कथयति?

	'कः'	'कम् प्रति'
(क) किम् अस्त्यस्माकं गेहे कोऽपि प्रातराशः?	....	....
(ख) मुहूर्तकं प्रतिपालयतु आर्यः।	....	....
(ग) आर्य! निमन्त्रितोऽसि।	....	....
(घ) न खल्वहं नष्टां श्रियम् अनुशोचामि।	....	....
(ङ) अलं भवतः सन्तापेन।	....	....

उत्तरम्—

	'कः'	'कम् प्रति'
(क)	सूत्रधारः	नटीं
(ख)	नटी	सूत्रधारम्
(ग)	सूत्रधारः	विदूषकम्
(घ)	चारुदत्तः	विदूषकम्
(ङ)	विदूषकः	चारुदत्तम्

प्रश्न 13. अधः कानिचित् कथनानि भावपरकानि सन्ति। मञ्जूषायाः तं तं भावं विचित्य तत् तत् कथनसमक्षं लिखत—

(क) आर्य! दिष्ट्या खलु आगेतोऽसि ....

(ख) यदि आर्यस्यानुग्रहः स्यात् तर्हि कञ्चिद् योग्यं जनं निमंत्रयितुम् इच्छामि। ....

(ग) भोः दारिद्र्यं नाम मनस्विनः पुरुषस्य सोच्छ्वासं मरणम्। ....

(घ) गुणरसज्ञस्य तु पुरुषस्य व्यसनं दारुणतरं मां प्रतिभाति। ....

(ङ) चिरं जीव, एवं शोभनानां भोजनानां दात्री भव। ....

(च) आर्ये! किमेतत् सर्वम् अस्माकं गेहेऽस्ति! ....

(छ) वयस्य किमर्थं सन्तापं करिष्ये। ....

(ज) अलम् इदानीं भवान् अतिमात्रं सन्तप्तुम्। ....

(निवेदनम्, हर्षः, दया, शोकः, आशीर्वादः, सन्तोषः, सान्त्वना, आश्चर्यम्)

उत्तरम्— (क) आर्य! दिष्ट्या खलु आगतोऽसि — हर्षः

(ख) यदि आर्यस्यानुग्रहः स्यात् तर्हि कञ्चिद् योग्यं जनं निमंत्रयितुम् इच्छामि। — निवेदनम्

(ग) भोः दारिद्र्यं नाम मनस्विनः पुरुषस्य सोच्छ्वासं मरणम्। — शोकः

(घ) गुणरसज्ञस्य तु पुरुषस्य व्यसनं दारुणतरं मां प्रतिभाति। — दया

(ङ) चिरं जीव, एवं शोभनानां भोजनानां दात्री भव। — आशीर्वादः

(च) आर्ये! किमेतत् सर्वम् अस्माकं गेहेऽस्ति! — आश्चर्यम्

(छ) वयस्य किमर्थं सन्तापं करिष्ये। — सन्तोषः

(ज) अलम् इदानीं भवान् अतिमात्रं सन्तप्तुम्। — सान्त्वना

प्रश्न 14. अधः प्रदत्तवाक्यांशनां भावार्थेषु उचितं भावार्थं (√) चिह्नितं कुरुत—

(क) बहुलपक्षचन्द्रस्य ज्योत्स्नापरिक्षय इव भवतः एव रमणीयोऽयं दरिद्रभावः।

(i) यथा कृष्णपक्षे चन्द्रः सततं प्रकाशहीनः भवति तथैव शनैः शनैः चारुदत्तः धनहीनो जातः।

(ii) यथा कृष्णपक्षे क्षयं प्राप्ता चन्द्रकला शुक्लपक्षे प्रतिपत्तिथौ शुभा भवति, तथैव दानेन धनविहीनस्य चारुदत्तस्य दरिद्रता शोभते एव।

(iii) क्षीणा चन्द्रकलेव चारुदत्तस्य दरिद्रता शोभते।

(ख) गुणरसज्ञस्य तु पुरुषस्य व्यसनं दारुणतरं मां प्रतिभाति।

(i) गुणवतः कारुण्यादिभावयुक्तस्य सुहृदयजनस्य दारिद्र्यम् असह्यमेव चारुदत्तस्य कृते।

(ii) यः गुणवानः रसज्ञः च भवति तस्य दरिद्रता घोरा भवति।

(iii) गुणरसज्ञः पुरुषः तु विपत्तिं न चिन्तयति।

(ग) सत्त्वं च न परिभ्रष्टं यद् दरिद्रेषु दुर्लभम्।

(i) दरिद्रावस्थायाम् मनुष्यः भ्रष्टो भवति।

(ii) दरिद्रेषु कोऽपि मानवः भ्रष्टो भवति।

(iii) दरिद्रावस्थायां यस्य मनः नैव भ्रष्ट जातम्, तत्तु दुर्लभमेव।

उत्तरम्— (क) (ii) **उचित भावार्थ**—यथा कृष्णपक्षे क्षयं प्राप्ता चन्द्रकला शुक्लपक्षे प्रतिपत्तिथौ शुभा भवति, तथैव दानेन धनविहीनस्य चारुदत्तस्य दरिद्रता शोभते एव। (√)

(ख) (i) **उचित भावार्थ**—गुणवतः कारुण्यादिभावयुक्तस्य सुहृदयजनस्य दारिद्र्यम् असह्यमेव चारुदत्तस्य कृते। (√)

(ग) (iii) **उचित भावार्थ**—दरिद्रावस्थायां यस्य मनः नैव भ्रष्ट जातम्, तत्तु दुर्लभमेव। (√)

पाठ-विकासः

क. कवि परिचयः संस्कृतसाहित्ये प्रसिद्धः खलु महाकविः भासः। असौ महाकावेः कालिदासाद् अपि पूर्ववर्ती। प्रायः विद्वांसः अस्य कालः ई. पू. चतुर्थशताब्दी इति मन्यन्ते। स उत्तरभारतवासी आसीद् इति विदुषां मतम्।

ख. कृतिपरिचयः टी. गणपतिशास्त्रीमहोदयेन महाकवेः भासस्य त्रयोदशनाटकानां गवेषणा कृता। तानि सन्ति–

1. प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् 2. स्वप्नवासवदत्तम् 3. प्रतिमानाटकम् 4. पञ्चरात्रम् 5. अभिषेकनाटकम् 6. मध्यमव्यायोगः 7. अविमारकम् 8. चारुदत्तम् 9. कर्णभारम् 10. दूतवाक्यम् 11. दूतघटोत्कचम् 12. ऊरुभङ्गम् 13. बालचरितम्

(क) कवि परिचय–संस्कृतसाहित्य में निश्चय ही महाकवि भास प्रसिद्ध हैं। ये महाकवि कालिदास के पूर्ववर्ती हैं। प्रायः विद्वान् इनका समय ई. पू. चौथी शताब्दी मानते हैं। वे उत्तर भारत के रहने वाले थे-ऐसा विद्वानों का मत है।

(ख) कृति परिचय–टी. गणपतिशास्त्री महोदय के द्वारा महाकवि भास के तेरह नाटकों की खोज की गई है। वे हैं–

1. प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् 2. स्वप्नवासवदत्तम् 3. प्रतिमानाटकम् 4. पञ्चरात्रम् 5. अभिषेकनाटकम् 6. मध्यमव्यायोगः 7. अविमारकम् 8. चारुदत्तम् 9. कर्णभारम् 10. दूतवाक्यम् 11. दूतघटोत्कचम् 12. ऊरुभङ्गम् 13. बालचरितम्।

भावविस्तारः

दारिद्र्यम्

क. **निदाघसंशुष्क इव ह्रदो महान्**
नृणां तु तृष्णामपनीय शुष्यति। 'चारुदत्तम्' 1/26
गर्मी में सूखे तालाब के समान चारुदत्त, लोगों की प्यास बुझाकर सूख जाता है।

ख. **शङ्कनीया हि दोषेषु निष्प्रभावा दरिद्रता।** 'चारुदत्तम्' 3/15
अपराधों के होने पर प्रभावहीन दरिद्र पर शङ्का की जाती है।

ग. **गतिरेकैव वित्तस्य दानमन्या विपत्तयः।** ग. पु. 2.26.33;
धन की एकमात्र गति है 'दान' और गति तो विपत्ति रूप है।

घ. **जीवत्यर्थदरिद्रोऽपि धीदरिद्रो न जीवति।।** कथासरित्सागरः 10.8.42
पैसे से दरिद्र होकर व्यक्ति जी लेता है, पर बुद्धि से दरिद्र होने पर जीवंत नहीं होता।

ङ **संपत्तौ विपत्तौ च महतामेकरूपता।**
सम्पत्ति और विपत्ति दोनों में महान पुरुष एक जैसे होते हैं।

च. **मनसि च संतुष्टे कोऽर्थवान् को दरिद्रः।** भर्तृहरिः
मन के सन्तुष्ट होने पर कौन दरिद्र और कौन धनवान्?

प्रमुखनाट्यतत्त्वनि

नान्दी नाटकस्य निर्विघ्न-समाप्त्यर्थं देवद्विजनृपादीनां आशीर्वचनाप्राप्तयर्थं या स्तुतिः नाट्यपात्रैः क्रियते सा 'नान्दी' इति कथ्यते। नान्दी 'मङ्गलाचरणम्' ऽति। (पृ० 42)

नेपथ्ये वेशपरिवर्तनस्थाने कुशीलवकुटुम्बस्य गृहं नेपथ्यमुच्यते।

नाटकम् रूपकस्य एकः भेदः। वीर शृङ्गारयोरेकः प्रधानं यत्र वर्ण्यते। प्रख्यातनायकोपेतं नाटकं तदुदाहृतम्।। (दशरूपकम् 3/1)

नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात् पञ्चसन्धिसमन्वितम्।
विलासार्घ्यादिगुणवद्युक्तं नानाविभूतिभिः।
सुखदुः खसमुद्भूतिं नानारसनिरन्तरम्।
पञ्चादिकादशपरास्तत्राङ्काः परिकीर्तिताः (सा. द. 6-8)
नायकः त्यागी कृती कुलीनः सुश्रीको रूपयौवनोत्साही।
दक्षोऽनुरक्तलोकस्तेजोवैदग्ध्यशीलमन्नेता। (सा. द. 3/30)

भाषाविस्तारः

उपपदविभक्तेः प्रयोगः

उपपदविभक्तिः विशिष्टं पदम् आश्रित्य या विभक्तिः भवति, सा उपपदविभक्तिः कथ्यते। यथा गुरवे नमः (गुरू को नमस्कार) अत्र 'नमः' पदयोगे चतुर्थी।

अत्र उपपदविभक्तेः कानिचिद् उदाहरणानि दीयन्ते।

	पदयोगे	उपपदविभक्तिः	उदाहरणानि
1.	नाम	प्रथमा	1. वने भासुरकः नाम सिंहः आसीत्
2.	प्रति		
	अधिशेते	द्वितीया	2. त्वं गृहम् प्रति गच्छसि।
	अध्यास्ते		3. राजा प्रासादम् अधिशेते/अध्यास्ते/
	अधितिष्ठति		अधितिष्ठति।
	याच्, दुह्, पच्,		4. बटु बलिम् याचते वसुधाम्।
	प्रच्छ्, दण्ड्, नी, वह्		
	आदिधातूनां योगे	द्वितीया	
	विना	द्वितीया/तृतीया/पञ्चमी	5. मित्रम्/मित्रेण/मित्रात् विना सुखं नास्ति।
3.	सह/साकम्/सार्धम्	तृतीया	6. पिता पुत्रेण सह गच्छति।
	तुल्य/सदृश/समम्	तृतीया	7. दानेन तुल्यः निधिः नास्ति।
	अङ्गविकारार्थकपदयोगे	तृतीया	8. नेत्रेण काणः।
	अलम् (निषेधार्थक)	तृतीया	9. अलं विवादेन
4.	नमः/स्वस्ति/स्वाहा	चतुर्थी	10. आचार्याय नमः
	क्रुध् धातुयोगे	चतुर्थी	11. पिता पुत्राय कुध्यति।
	अलम् (पर्याप्त-अर्थे)	चतुर्थी	12. रामः रावणाय अलम्
5.	बहिः	पञ्चमी	13. ग्रामाद् बहिः उद्यानम्
6.	निर्धारणार्थे	षष्ठी/सप्तमी	14. नदीनाम्/नदीषु गङ्गा श्रेष्ठा
7.	कुशलः, निपुणः	सप्तमी	15. त्वम् युद्धे कुशलः।
	स्निह्धातुयोगे	सप्तमी	16. माता पुत्रे स्निह्यति।

पदानुशीलनी

भणामि (क्रि.)	(भण् + लट्, उ. पु. ए. व.)	वदामि; बोलता हूँ; I say, speak.
उपसर्पामि (क्रि.)	(उप + सृप् लट्, उ. पु.ए.व.)	समीपं गच्छामि, पास जाता हूँ; I approach.
यथाविभवम् (क्रि. वि.)		ऐश्वर्यानुसारम्; धन की सामर्थ्य के अनुसार; as per the riches.
चङ्गेरिकाहस्ता (वि.)(स्त्री)		चङ्गेरिका हस्ते यस्याः सा (चेटी) पुष्पाधानपात्रविशेषयुक्ता; फूल रखने की डलिया हाथ में लिये हुए, (दासी); The maid with flower-pot in hand.
मनस्विनः (वि.)	(पुं. मनस्विन् ष.वि.ए.व.)	उच्चमनसः, उदारचसेतसः; ऊँचे मनवाले, चतुर, बुद्धिमान् का, स्वाभिमानी का; of the intelligent one.
सोच्छ्वासं (अव्य.)	(उच्छ्वासेन सह)	उच्छ्वासयुक्तं; उच्छ्वासयुक्त; (लम्बी सांस युक्त), with a deep breath.
सन्तप्तुम्	(अव्य.)	सम् + तप् + तुमुन् = दुःखीभवितुं; सन्ताप (दुःख) करने से (अलम्) बस करें; enough of feeling unhappy.

बहुपक्षचन्द्रस्य	(पु.)	(बहुलपक्षस्य चन्द्रस्य, ष.त.) कृष्णपक्षचन्द्रस्य; कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा की; of the moon of Krishna paksh.
विभवानुवशा (वि.) (स्त्री)		(विभववशात् अनुवशा, तत्पु०) धनवशात् अनुकूलकार्यकारिणी (भार्या) विपुलधन के कारण सदा अनुकूल रहने वाली स्त्री; a wife favourable due to wealth.
समदुःखसुखः (वि.)	दुःखं च सुखं च (द्वन्द्वः) समे दुःखसुखे यस्य सः (बहुव्रीही)	सुखदुःखयोः समानभावः यस्य सः, दुःख सुख में समानभाव रखने वाले; one feelings the same in happiness and sorrow.
सत्त्वं (नपुं.)	मनः (सत्त्वगुणयुक्त)	सत्त्वशाली मन; a mind with pure thoughts.
परिभ्रष्टं (नपुं.)		विचलितं; पथभ्रष्ट हुआ; fallen from the right path.
निःश्वस्य (अव्य.)	(निस् + श्वस् + ल्यप्)	दीर्घ श्वासम् आकृष्य; गहरा श्वास लेकर; having taken a deep breath.
सम्पन्नम् (वि.)		सुपक्वम् स्वादयुक्तं; अच्छी तरहा पका हुआ, स्वादिष्ट; tasty, well cooked.
पुष्करपत्रपतित-जलबिन्दू इव	पुष्करस्य पत्रे पतितौ जलबिन्दू इव (स. त.)	कमलपत्रे पतिते जलबिन्दु इव चञ्चले; कमल के पत्ते पर पड़ी हुई दो पानी की बूंदों की तरह चंचल; fickle as drops on a lotus-leaf.
अशनम् (नपुं.)	(अश् + ल्युट्)	भोजनम्; भोजन; food.
अशितव्यम् (नपुं.)	(वि.) (अश् + तव्यत्)	भक्षणीयम्; खाने योग्य; fit to be eaten.
अशित्वा (अव्य.)	(अश् + क्त्वा)	खादित्वा; खाकर; having eaten.
अहोरात्रम्	(अव्य.)	दिवानिशम्; रातदिन; day and night. (अहः च रात्रिश्च अनयोः समाहारः)
पारावतैः (पु.)	पारावत (तृ. ब. व.)	कपोतैः; कबूतरों के समान; Like the pigeons.
संविधा (सं.)	(स्त्री. प्र. ए. व.)	भोजन व्यवस्था; खाने-पीने का प्रबन्ध; food arrangements.
प्रातराशः	(प्रातःकाले अश्यते भुज्यते इति प्रतिराशः कर्मणि घञ्)	प्रभातभोज्यम्; जलपान; morning breakfast.
विहिता (वि.)	(वि + धा + क्त + टाप्)	(स्त्री. प्र. वि. ए. व.); कृता, की गई हुई; has been done.
दिष्ट्या (अव्य.)		भाग्येन; भाग्य से; luckily.
तण्डुलाः (सं.)	(पुं. प्र. ब. व.)	अक्षताः; चावल; rice
अन्तरापणे (पु.)	(अन्तर् + आपणे)	विपणौ; बाजार में, दुकान में; in the shop.
पर्वताद् दूरमारोप्य		अत्युन्नतमनोरायात् स्थानात् चेति वा; पर्वत से भी दूर उठाकर अर्थात् पर्वत से भी ऊँचे उठाकर, अर्थात् बहुत ऊँची आशा दिलाकर बाद में निराशा से चकनाचूर कर दिया; dropped after raising high up above the levels of a mountain.
बिभीहि (क्रि.)	(भी, लोट्, म. पु. ए. व.)	भयं मा कुरू; डरो मत; Don't be afraid.
ज्योत्स्नापरिक्षयः इव (पु.)		(ज्योत्स्नायाः परिक्षयः (ष. त.) चन्द्रकलायाः क्षयः; चन्द्रमा की कला के क्षय के समान; like the leaning moon-light.

श्रियम् (स्त्री)	(श्री, द्वि. वि. ए. व.)	सम्पदम्; सम्पत्ति को; wealth.
गुणरसज्ञस्य (वि.)	(गुणः च रसः च इति तस्य गुणरसौ (उपपदतत्पु.) (द्वन्द्वः) तौ जानाति गुणरसज्ञः	अनुभूतविभवफलसारस्य; योग्यता आदि गुण एवं करुणा आदि रसों के अनुभवी सहृदय पुरुष की; of one who knows the merits and the Rasas.
व्यसनं (नपुं)	(वि + अस् + ल्युट्)	दारिद्र्यम्: दरिद्रता को, विपत्ति को; poverty, calamity.
अर्थविभवं (पु.)	अर्थानां विभवः तम् (ष. त.)	(द्वि. वि. ए. व.) ऐश्वर्यम्; ऐश्वर्य को; prosperity.
प्रत्ययादेव (सं.)	(प्रत्ययात् + एव) (प्रत्यय शब्दः, पञ्चमी विभक्तिः)	विश्वासादेव; विश्वास के कारण ही; due to confidence.
नष्टधनश्रियः (वि.)	(नष्टा धनश्रीः यस्य एवं भूतस्य (ब. व्री.)	नष्टधनस्य; धन नष्ट हुए की, निर्धन की; of a man who has lost his wealth.
सौहृदानि (सं.)	(नपुं. प्र. ब. व.)	कुटुम्बजनानां मित्रता; पारिवारिक जन, मित्रवर्ग; friends.
सुजने (वि.)	(सुजन स.वि.ए.व.)	सज्जने; सज्जन व्यक्ति में भी; even in a gentleman.
परैः (सर्व.)	(पर–तृ.वि.ब.व.)	सामान्यजनैः; साधारण जन के द्वारा, शत्रुओं द्वारा, परायों द्वारा; by the enemies.